GISI Impact Factor 0.2310
सितम्बर-अक्टूबर 2015
वर्ष - 9 अंक - 5
ISSN 0973-9777
ijraeditor@yahoo.in

भारतीय शोध पत्रिका

आन्वीक्षिकी

मासद्वयी अन्तर्राष्ट्रीय शोध समग्र पत्रिका

www.anvikshikijournal.com

प्रकाशन
एम.पी.ए.एस.वी.ओ. द्वारा आन्वीक्षिकी सदस्य सहसंयोजन से प्रकाशित
अन्य सहसंयोजन
सार्कः अन्तर्राष्ट्रीय शोध-पत्रिका
एशियन जर्नल ऑफ माडर्न एण्ड आयुर्वेदिक मेडिकल साइंस
वाराणसी, उ०प्र० (भारत)

MPASVO

आन्वीक्षिकी

भारतीय शोध पत्रिका
वर्ष-9 अंक-5 सितम्बर-2015

शोध प्रपत्र

दुष्यन्त कुमार और अदम गोंडवी के कृतित्व पर तुलनात्मक दृष्टि -डॉ. प्रभा दीक्षित 1-5
आतंकवाद का समाधान : साहित्यिक संदर्भ -डॉ. आशा वर्मा 6-9

ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानियों में व्याप्त दलित संवेदनायें -डॉ. आरती बंसल 10-12
रामचरितमानस की भाषिक मार्मिकता और ध्वनिशास्त्रीय दृष्टिकोण -डॉ. सुजीत कुमार सिंह 13-17

"मीडिया" के नकारात्मक प्रभावों को चित्रित करती : 21वीं सदी की हिन्दी कविता -डॉ. राधा वर्मा 18-23
केदारनाथ अग्रवाल की साहित्यिक अवधारणा -डॉ. विकास कुमार सिंह 24-29

मध्यकालीन नीतिकाव्य का समकालीन विमर्श -डॉ. विजय कुमार 30-33
संत कवियों का साहित्यिक विद्रोह -डॉ. सच्चिदानंद द्विवेदी 34-41

समकालीन कविता में प्रतीक विधान : अज्ञेय एवं मुक्तिबोध के विशेष संदर्भ में -डॉ. रमेश टण्डन 42-45
उपनिषदों के साधना खण्ड में नारी विवेचना -डॉ. मनीषा शुक्ला 46-56

ईश्वर प्राप्ति के मार्गों का विवेचन -डॉ. स्मिता द्विवेदी 57-60
कालिदास संस्कृत भाषा के महान कवि और नाटककार -डॉ. सपना भारती 61-65

ब्रह्मसूत्र पर शंकर का अद्वैत तथा सांख्य योग का द्वैत सिद्धान्त : विहंगम दृष्टि -डॉ. तनूजा अग्रवाल 66-69
अभिज्ञानशाकुन्तलम् : प्रत्याख्यान तथा पुनर्मिलन की एक सुन्दर कथा -डॉ. सपना भारती 70-73

संगीत चिकित्सा : रागों से होता है रोग निवारण -डॉ. ममता अग्रवाल 74-75
ईसा पूर्व भारतीय गणित के विकास का कालक्रम -रामनिवास पाण्डेय 76-78

भारतीय दर्शन में पर्यावरणीय चिंतन -डॉ. कीर्ति चौधरी एवं 79-81
पर्यावरण तथा वनस्पतियाँ -डॉ. ममता अग्रवाल 82-84

पूर्व मध्य काल में स्त्रियों की शिक्षा -डॉ. सुम्बुला फिरदौस 85-89
ईस्वी सन् 1000-1800 तक भारतीय गणित का विकास और भारतीय के गौरवशाली गणितज्ञ -रामनिवास पाण्डेय 90-94

शास्त्रीय संगीत के ठुमरी में संगीत शिक्षक के सम्मुख चुनौतियाँ : एक आलोचनात्मक अध्ययन -सुश्री ममता अग्रवाल 95-97
भारत में विनिवेश की भूमिका -डॉ. सिद्धार्थ पाण्डेय 98-103

ग्लोबल वार्मिंग- महाविनाश की लीला -प्रो. अंजली श्रीवास्तव 104-107

प्रिंट ISSN 0973-9777, वेबसाइट ISSN 0973-9777

पत्रावली संख्या V-34564, पंजीकरण संख्या 533/2007-2008
आन्वीक्षिकी ISSN 0973-9777

भारतीय शोध समग्र पत्रिका (2015) 9,42-45
प्रकाशनार्थ स्वीकृत 23 अगस्त 2015

समकालीन कविता में प्रतीक विधान : अज्ञेय एवं मुक्तिबोध के विशेष संदर्भ में

डॉ. रमेश टण्डन*

लेखक का घोषणा-पत्र

भारतीय शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशनार्थ प्रेषित *समकालीन कविता में प्रतीक विधान : अज्ञेय एवं मुक्तिबोध के विशेष संदर्भ में* शीर्षक लेख / शोध प्रपत्र का लेखक मैं *रमेश टण्डन* घोषणा करता हूँ कि लेखक के रूप में इस लेख की सभी सामग्रियों की जिम्मेदारी लेता हूँ, क्योंकि मैंने स्वयं इसे लिखा है और अच्छी तरह से पढ़ा है और साथ ही अपने लेख / शोध प्रपत्र को शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी में प्रकाशित होने की स्वीकृति देता हूँ। यह लेख / शोध प्रपत्र मूल रूप में या इसका कोई अंश कहीं और नहीं छपा है और न ही कहीं मैंने इसे छपने के लिए भेजा है। यह मेरी मौलिक कृति है। मैं शोध पत्रिका आन्वीक्षिकी के सम्पादक मण्डल को अपने लेख के संशोधन एवं सम्पादन की पूर्ण अनुमति देता हूँ। आन्वीक्षिकी में लेख प्रकाशित होने पर इसके कापीराइट का अधिकार सम्पादक को देता हूँ।

प्रतीक वह अनुभूति संकेत है जो भावाभिव्यक्ति को गहराई प्रदान करता है और अर्थ को उसकी तह से संप्रेशित करता है। अज्ञेय प्रतीकवादी कवि नहीं बल्कि प्रतीकधर्मी कवि हैं। उन्होंने विशेषवाद से जुड़ने के लिए प्रतीकों की सृष्टि नहीं की। अनुभूति के दबावों में ही उन्हें प्रतीकों के अन्वेषण के लिए भटकाया गया है। इन्होंने वैयक्तिक प्रतीकों का प्रयोग अधिक किया है। उनके प्रतीकों की यह विशेषता है कि वे अर्थों की लड़ियां हमारे सामने खोल देती हैं। अज्ञेय शब्द या निहित वाक्य में कल्पना को प्रतीकात्मकता प्रदान कर देते हैं परन्तु इससे भी अधिक पूरे प्रसंग को, कथांश को, घटनाओं को भी प्रतीकात्मक रूप प्रदान करते हैं।

मुक्तिबोध के प्रतीकों की दुनिया कई अर्थों में फैली हुई है। वे प्रतीक शैली के कवि हैं यह कहना तो ठीक नहीं होगा, फिर भी उनकी कविता प्रतीकों की बहुआयामी दुनिया प्रस्तुत करती है।

अज्ञेय

सैद्धांतिक तौर पर अज्ञेय जी ने प्रतीकों के महत्त्व पर बड़ी सूक्ष्मता से विचार किया है। वे कहते हैं, "प्रतीक अपने आप में अनिष्ट नहीं है : आशंकनीय यह बात होती है कि ये प्रतीक निजी न बन जावें- बन क्या जावें, रह न जावें, क्योंकि निजी को सामान्य बनाना ही तो कवि-कर्म है। व्यापक सत्य को कवि निजी करके देखता है और निजी दृष्टि को फिर साधारण बनाता है। साधारण का वर्णन कविता में नहीं है, कविता तभी होती है जब साधारण पहले निजी होता है और फिर व्यक्तियों से छनकर साधारण होता है। जो इसको भूलते हैं उनके पद्य, सदुद्देश्य न होकर भी कविता नहीं बन सकते और चाहे कुछ हो जावे।"[1]

* सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय [खरसिया] रायगढ़ (छत्तीसगढ़) भारत। E-mail : rameshktandan@gmail.com

© लेखक 2015, एम.पी.ए.एस.सी.ओ. मुद्रण एवं आन्वीक्षिकी सदस्य सहसंयोजन से प्रकाशित, सर्वाधिकार सुरक्षित मनीषा प्रकाशन। आज्ञा हेतु कृपया सम्पर्क करें : E-mail : maneeshashukla76@rediffmail.com & ijraeditor@yahoo.in, इस प्रपत्र को www.anvikshikijournal.com पर पढ़ें

कोई भी स्वस्थ काव्य नये प्रतीकों की सृष्टि करता है और जब वह वैसा करना बन्द कर देता है तो वह जड़ हो जाता है। जड़ हो जाने पर वह पुराने प्रतीकों पर निर्भर रहने लगता है, इसलिए अज्ञेय काव्य में प्रतीकों को महत्त्व देते हैं।

"प्रतीक को अज्ञेय ने सत्यान्वेषण का साधन कहा है। अज्ञेय की दृष्टि में जीवन स्वप्नों और आकारों का एक रंगीन और विस्मय भरा पुंज है। हम चाहे तो जीवन भर उसी पुंज में उलझे रह सकते हैं। रूप के प्रति यह आकर्षण भी हमारे जीवन के प्रति आकर्षण का प्रतिबिम्ब है।"[2] उनकी यह बात कविता द्वारा स्पष्ट होती है, "हम निहारते रूप/ कांच के पीछे हांफ रही मछली/ रूप तृषा भी/ और कांच के पीछे है जिजीविशा।"[3]

कवि समयानुसार भिन्न-भिन्न प्रतीकों का आश्रय ग्रहण करता है। इन प्रतीकों के अर्थ अलग-अलग होते हैं। जो प्रतीक अधिकतर एवं दीर्घकालीन प्रयोग में लाये जाते हैं, वे व्यापक हो जाते हैं। यह इसलिए कि "वास्तव में प्रतीक एक, ज्ञान का उपकरण है। जो सीधे-सीधे अभिधा में नहीं बंधता उसे आत्मसात् करने के लिए या प्रेरित करने के लिए प्रतीक काम देते रहते हैं।"[4]

प्रतीकों के उत्पन्न ज्ञान और सामान्य ज्ञान में अन्तर के सम्बन्ध में अज्ञेय जी का मत है कि "वैज्ञानिक सागर की गहराई नापने के लिए रस्सी डालता है या किरणों की प्रतिध्वनि का समय ढूंढता है। वह एक प्रकार का ज्ञान है। वह प्रतीक द्वारा सत्य को जानता है। सत्य के सागर में प्रतीक रूपी कंकड़ी फेंककर उसकी थाह का अनुमान करता है। यदि हम सागर को हमारे न जाने हुए सब कुछ प्रतीक मान लें, तो मछली उस प्रतीक का प्रतीक हो जाती है जिसके द्वारा कवि अज्ञात सत्य का अन्वेषण करता है।"[5] अज्ञात सत्य का अन्वेषण कवि प्रतीकों के माध्यम से करता है और प्रतीक और प्रतीक में अन्वेषित होते चले जाते हैं। समय के अनुसार प्रतीकों के भी अर्थ बदल जाते हैं। पुराने प्रतीक, प्रतिमान सब व्यर्थ हो जाते हैं। इसीलिए अज्ञेय नवीन काव्य प्रतीकों की खोज पर बल देते हैं। "प्रतीक विधान में कवि स्वप्न, सत्य, अनुभूति और इन्द्रिय बोध को विचित्र ढंग से संयोजित करके वर्ण्य वस्तु को अपने भावोन्मेष का प्रतीक बनाने की चेष्टा करता है। दूसरे शब्दों में वह वर्ण्य वस्तु को प्रतीकों द्वारा खोज लेना चाहता है। इस तरह प्रतीक सत्य, ज्ञान के अन्वेषण का एक विशेष माध्यम है।"[6]

रूढ़ि में बंधना अज्ञेय को स्वीकार नहीं, परन्तु स्वस्थ परम्परा को वे नकारना नहीं चाहते, "खोल दो नाव/ जिधर बहती है/ बहने दो"[7]; "जीवन के बीहड़ में दीपक एक जला देना।"[8]

'अहेरी' अज्ञेय का प्रिय प्रतीक है। अज्ञेय ने फिट्जरालड से प्रभावित होकर 'अहेरी' प्रतीक का प्रयोग किया है। अहेरी, खंडहर, अनी तीन प्रतीकों के माध्यम से उन्होंने प्रकृति चित्रण किया है। अहेरी सूर्य का प्रतीक है, खंडहर उनके अन्तस् का प्रतीक है, अनी किरणों का प्रतीक है। यहाँ सूर्य-किरणों से अन्तरात्मा के अन्धकार को बेधने की बात कही गई है, "बावरा अहेरी रे/.....लो, मैं खोल देता हूँ कपाट सारे/ मेरे इस खंडहर की शिरा-शिरा छेद दे/ आलोक अनी से अपनी।"[9]

रोमांटिक प्रसंग में भी अज्ञेय ने 'अहेरी' प्रतीक का प्रयोग किया है, "कई बार आकर्णतान धनु/ लक्ष्य साधकर/ तीर छोड़ता हूँ मैं/ प्रत्यंचा को/ देता हूँ टंकार अनमना/ मेरे हाथ कुछ नहीं आता, दूर कहीं पर/ हाय! मर्म में कोई बिंध जाता है।"[9]

अज्ञेय समाज के प्रति अपने दायित्व को स्वीकार करते हैं। 'दीप और पंक्ति' के प्रतीक द्वारा अज्ञेय ने अपने इस दृष्टिकोण को अभिव्यक्त किया है, "यह दीप अकेला, स्नेह भरा/ है गर्व भरा मदमाता पर/ इसको भी पंक्ति दे दो।"[10]

मुक्तिबोध

प्रगतिशील कवि होने के नाते मुक्तिबोध प्राचीन संस्कृति की शोषणकारी प्रवृत्तियों के विरुद्ध हैं और इसी शोषणकारी प्रवृत्तियों को स्पष्ट करने के लिए मुक्तिबोध ने इतिहास, पुराण मान्य अनेक प्रतीकों का प्रयोग किया है।

".....आंखें फाड़े मैंने देखा मन के मन में/ जाने कितने कारावासी वासुदेव/ स्वयं अपने कर में, शिशु आत्मज ले/ बरसाती रातों में निकले/ वैसे रहे अंधेरे जंगल में/ निर्बुध्य पूर में यमुना के/ अति दूर अरे उस नन्दग्राम की ओर चले/ जाने किसके डर से स्थानांतरित कर रहे थे/ जीवन आत्मज सत्यों को/ किस महाकंस से भय खाकर गहरा-गहरा।"[11]

उपरोक्त काव्य पंक्तियों में वासुदेव शोषित का, महाकंस शोषक का और शिशु आत्म (कृष्ण) का प्रतीक है। सत्य के निष्कासन की परम्परा प्राचीन समय से रही है। यही कवि का अभिप्राय है।

पौराणिक प्रतीक के रूप में तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों का ही चित्रण हुआ है, "आयु में यद्यपि मैं प्रौढ़/ बुद्धि से बालक हूँ/ मैं एकलव्य जिसने निरखा-/ ज्ञान के बन्द दरवाजे की दरार से ही/ भीतर का महामंथनशाली मनोज्ञ/ प्राणाकर्षक प्रकाश देखा है।"[12]

'बरगद' मुक्तिबोध में प्रिय प्रतीकों में से एक है। इसका प्रयोग उन्होंने कभी जीवन के रूप में, कभी परम्परा के रूप में, तो कहीं स्नेह के रूप में किया है। स्नेह के रूप में बरगद का प्रतीक इस उदाहरण से स्पष्ट होता है, "चिलचिला रहे फासले तेज दुपहर भूरी/ सब ओर गरम धार-सा रेंगता चला/ काल बांका तिरछा/ पर तुम्हारे हाथ में जब भी मित्र का हाथ/ फैलेगी बरगद छांह वहीं।"[13]

और कहीं बरगद कर्फ्यू से आतंकित शहर बन जाता है, "इन्हीं हलचलों के कारण तो सहसा/ बरगद में पले हुए पंखों की डरी हुई चौंकी हुई/ अजीब-सी गन्दी-सी फड़फड़.....।"[14]

निराशा के प्रतीक के रूप में 'बरगद' का चित्रण इस प्रकार है, "चीहड़ के अंधकार में भी/ जब नहीं कुछ सूझ पड़ता है/ जब अंधियारा समेट बरगद/ तम की पहाड़ियों से दिखते।"[15]

विषादमय जीवन के प्रतीक के रूप में 'बरगद' का प्रयोग किया गया है। कष्टमय जीवन के लिए कैक्टस और सुखी जीवन के लिए 'तुलसी' का प्रयोग मुक्तिबोध ने किया है। यंत्र प्रतीकों के लिए कवि ने यांत्रिक जीवन को चुना है। "इस दिल भरे रिवाल्वर में बेचैनी जोर मारती है,/ उसमें क्या शक/ क्यों ताकतवर मशीन के/ पिस्टन की-सी दिल की धक्-धक्/ उद्दाम वेग से चला रही/ ये लौह चक्र/ मन प्राण बुद्धि के विद्रोही/ यह स्याम स्टीम-रोलर जीवन का/ सुख-दुःख की कंकर मिट्टी पंक-सा करके/ है एक रास्ता बना रहा युग के मन का/ मेरे मन का।"[16]

भौगोलिक व ऐतिहासिक प्रतीक भी स्पष्ट दिखाई देते हैं। पृथ्वी का पूरा भूगोल उनकी कविताओं में मानव जीवन की समस्याओं को कहता है, "मेरी आँखों में धूमकेतु नीचे/ उल्काओं की पंक्तियां काव्य बन गयी,/ घोषणा बनी।"[17]

इन प्रतीकों का प्रयोग संघर्ष और क्रान्ति के लिए किया गया है। "....उसकी मेधा की ज्वालाएँ ऐसी फैलीं/ उस घास भरे जंगल-पहाड़ बंजर में/ यों दावाग्नि लगी/ मानो बूढ़ी दुनिया के सिर पर आग लगी/ सिर जलता है कन्धे जलते।"[18]

'काव्यात्मनू फणिधर' एक पूरी कविता का नायक बना हुआ है। यहाँ तक कि मुक्तिबोध की कविताओं के शीर्षक भी प्रतीकबद्ध है। 'ब्रह्मराक्षस' का ही उन्होंने अलग-अलग रूपों में प्रयोग किया है। 'नक्षत्र खण्ड' चकमक की चिनगारियां, अरुण कमल आदि कवि के आशावादी स्वप्नों के प्रतीक हैं। 'चम्बल की घाटी' शोषित और आतंकित दशकाल का प्रतीक है।

निष्कर्ष

अज्ञेय प्रतीकवादी कवि नहीं बल्कि प्रतीकधर्मी कवि हैं। उन्होंने विशेषवाद से जुड़ने के लिए प्रतीकों की सृष्टि नहीं की। अनुभूति के दबावों में ही उन्हें प्रतीकों के अन्वेषण के लिए भटकाया गया है। इन्होंने वैयक्तिक प्रतीकों का प्रयोग अधिक किया है। उनके प्रतीकों की यह विशेषता है कि वे अर्थों की लड़ियां हमारे सामने खोल देती हैं। अज्ञेय शब्द या निहित वाक्य में कल्पना को प्रतीकात्मकता प्रदान कर देते हैं परन्तु इससे भी अधिक पूरे प्रसंग को, कथांश को, घटनाओं को भी प्रतीकात्मक रूप प्रदान करते हैं।

मुक्तिबोध के प्रतीकों की दुनिया कई अर्थों में फैली हुई है। वे प्रतीक शैली के कवि हैं यह कहना तो ठीक नहीं होगा, फिर भी उनकी कविता प्रतीकों की बहुआयामी दुनिया प्रस्तुत करती है।

सन्दर्भ

[1]अज्ञेय, स0 हीo वाo : आत्मनेपद, पृ0 46
[2]शर्मा, डॉ0 शशि : समकालीन हिन्दी कविता : अज्ञेय और मुक्तिबोध, पृ0 73
[3]अज्ञेय, स0 हीo वाo : आत्मनेपद, पृ0 46
[4]--------वही----------, पृ0 47

[9]--------वही----------, पृ0 47
[10]अज्ञेय, स0 हीo वा0 : सदानीरा भाग-1, पृ0 20
[11]------वही----------, पृ0 23
[12]------वही----------, पृ0 241
[13]------वही----------, पृ0 261
[14]अज्ञेय, स0 हीo वा0 : सदानीरा भाग-2, पृ0 23
[15]मुक्तिबोध, ग0 मा0 : चांद का मुंह टेढ़ा है, पृ0 30
[16]मुक्तिबोध, ग0 मा0 : मुक्तिबोध रचनावली भाग-2, पृ0 271
[17]मुक्तिबोध, ग0 मा0 : भूरी-भूरी खाक धूल, पृ0 50
[18]------वही---------- पृ0 30-31
[19]मुक्तिबोध, ग0 मा0 : चाँद का मुँह टेढ़ा है, पृ0 53
[20]------वही----------, पृ0 56
[21]मुक्तिबोध, ग0 मा0 : मुक्तिबोध रचनावली भाग-2, पृ0 72
[22]------वही----------, पृ0 143